3-2-88

ब्रह्मा मात-पिता की अपने ब्राह्मण बच्चों के प्रति दो शुभ आशाएं

सर्व की सर्व आशाओं को पूर्ण करने वाले बापदादा अपने शुभ आशाओं के दीपक बच्चों को दिल के स्नेह का महत्व समझाते हुए बोले:-

आज विश्व की सर्व आत्माओं की सर्व आशायें पूर्ण करने वाले बापदादा अपनी शुभ आशाओं के रुहानी दीपकों को देख रहे थे। जैसे बाप सर्व की शुभ आशायें पूर्ण करने वाले हैं, तो बच्चे भी बाप की शुभ आशायें पूर्ण करने वाले हैं। बाप बच्चों की आशायें पूर्ण करते, बचे बाप की करते। बाप की बच्चों प्रति शुभ आशायें कौनसी हैं, वह जानते हो ना? हर एक ब्राह्मण आत्मा बाप की आशाओं के दीपक हैं। दीपक अर्थात् सदा जागती ज्योत। सदा जगा हुआ दीपक प्यारा लगता है। अगर बार-बार टिमटिमाता दीपक हो तो कैसा लगेगा? बाप की सर्व आशाओं को पूर्ण करने वाले अर्थात् सदा जगमगाते हुए दीपकों को बापदादा भी देख हर्षित होते हैं।

आज बापदादा आपस में रुहरिहान कर रहे थे। बापदादा के समाने सदा कौन रहते हैं? बच्चे रहते हैं ना। तो रुहरिहान भी बच्चों की ही करेंगे ना। शिव बाप ब्रह्मा से पूछ रहे थे कि बच्चों के प्रति अब तक कोई शुभ आशायें हैं? तो ब्रह्मा ने बोला कि बच्चे नम्बरवार अपनी शक्ति प्रमाण, स्नेह प्रमाण, अटेन्शन प्रमाण सदा बाप की शुभ आशाओं को पूर्ण करने में लगे हुए जरूर हैं, हर एक की दिल में उमंग-उत्साह जरूर है - जबकि बाप ने हमारी सर्व आशायें पूर्ण की हैं तो हम भी बापह की सर्व आशायें पूर्ण करके ही दिखायें। लेकिन करके दिखाने में नम्बरवार बन जाते हैं। सोचना और करके दिखाना - इसमें अन्तर पड़ जाता है। कोई-कोई बच्चे ऐसे भी हैं जो सोचना और करके दिखाना - इसमें समान हैं। लेकिन सभी ऐसे नहीं हैं। जिस समय बाप के स्नेह और बाप द्वारा प्राप्तियों को स्मृति में लाते हैं कि बाप ने क्या बनाया और क्या दिया, तो स्नेहस्वरूप होने के कारण बहुत उमंग-उत्साह में उड़ते हैं कि बाप ने जो कहा है वह मैं ही करके दिखाऊंगा। लेकिन जब सेवा के वा संगठन के सम्पर्क में आते हैं अर्थात् प्रैक्टिकल करने के लिए कर्म में आना पड़ता है जो कहाँ संकल्प और कर्म समान हो जाता है अर्थात् वही उमंग-उत्साह रहता है और कभी कर्म में आने समय संग-ठन के संस्कार वा माया वा प्रकृति द्वारा आये हुए सर्कमस्टांस रूपी पेपर कहाँ मुश्किल अनुभव कराते हैं। इसलिए स्नेह से जो उमंग-उत्साह का संकल्प रहा, वह सर्कमस्टांस कारण, संस्कार कारण करने में अन्तर डाल देता है। फिर सोचते हैं - अगर यह नहीं होता तो बहुत अच्छा होता। ''अगर'' और ''मगर'' के चक्र में आ जाते हैं। होना तो यह चाहिए लेकिन ऐसा हुआ, इसलिए यह हुआ - इस अगर, मगर के चक्र में आ जाते हैं। इसलिए उमंग-उत्साह का संकल्प और प्रैक्टिकल कर्म में अन्तर हो जाता है।

तो ब्रह्मा बाप बच्चों के प्रति विशेष दो आशायें सुना रहे थे। क्योंकि ब्रह्मा बाप को साथ ले भी जाना है और साथ रहना भी है। शिव बाप तो साथ ले जाने वाला है, राज्य में वा सारे कल्प में साथ नहीं रहना है। वह सदा साथ रहने वाला है और वह साक्षी हो देखने वाला है। अन्तर है ना। ब्रह्मा बाप को बच्चों के प्रति सदा ही समान बनाने की शुभ आशायें इमर्ज रहती हैं। वैसे बापदादा दोनों जिम्मेवार हैं लेकिन फिर भी रचता साकार में ब्रह्मा है इसलिए साकार रचना को साकार रचना के लिए स्वत: ही स्नेह रहता है। पहले भी सुनाया था ना - बच्चे, माँ-बाप - दोनों के होते हैं लेकिन फिर भी माँ का विशेष स्नेह बच्चों से रहता है क्योंकि पालना के निमित्त माँ बनती है। बाप-समान बनाने वाली निमित्त माँ होती है। इसलिए माँ की ममता गाई हुई है। यह शुद्ध ममता है, मोह वाली नहीं, विकार वाली नहीं। जहाँ मोह होता है, वहाँ परेशान होते हैं और जहाँ रुहानी ममता कहो, स्नेह कहो - वह होगा तो माँ को बच्चों के प्रति शान होता है, परेशान नहीं होती। तो ब्रह्मा माँ कहो, बाप कहो - दोनों रूप से बच्चों के प्रति कौनसी विशेष आशायें रखते हैं? एक बाप प्रति आशा है और दूसरी ब्राह्मण परिवार के प्रति शुभ आशा है। बाप प्रति शुभ आशा है कि - जैसे बापदादा साक्षी भी है और साथी भी हैं, ऐसे बापदादा समान साक्षी और साथी, समय प्रमाण दोनों ही पार्ट सदा बजाने वाले महान आत्मा बनें। तो बाप

प्रति शुभ आशा हुई - बापदादा समान साक्षी, साथी बनना।

एक बात में बापदादा दोनों बच्चों से पूर्ण संतुष्ट हैं, वह क्या? हर बच्चे का बापदादा से स्नेह अच्छा है, बापदादा से स्नेह कभी टूटता नहीं है और स्नेह के कारण ही चाहे शक्तिशाली बन, चाहे यथाशक्ति बन चल रहे हैं। ब्राह्मण आत्मा रूपी मोती बन स्नेह के धागे में पिराये हुए जरूर हैं। स्नेह का धागा मजबूत है, उससे टूट नहीं सकते हैं। स्नेह की माला तो लम्बी है, विजय माला छोटी है। बापदादा के स्नेह के ऊपर समर्पित भी हैं। कोई कितना भी बाप के स्नेह से जुदा करने चाले, तो ऐसे स्नेह में फिदा हैं जो जुदा हो ही नहीं सकते। सभी को दिल के स्नेह से ''मेरा बाबा'' शब्द निकलता है। तो स्नेह की माला में तो सन्तुष्ट हैं लेकिन बाप समान शक्ति-शाली वा ''अगर'', ''मगर'' के चक्र से न्यारे - इसमें सदा शक्तिशाली के बजाए यथाशक्ति हैं। बापदादा इसमें बाप समान सदा शक्तिशाली बनाने की सब बच्चों में शुभ आशा रखते हैं। जहाँ साक्षी बनना है, वहाँ कभी साथी बन जाते हैं और जहाँ साथी बनना है, वहाँ साक्षी बन जाते हैं। समय प्रमाण दोनों रीति निभाना - इसको कहते हैं बाप समान बनना। स्नेह की माला तो तैयार है लेकिन विजय माला इतनी लम्बी तैयार हो जाए - बापदादा यही शुभ आशा रखते हैं। १०८ तो क्या, बापदादा खुली छुट्टी देते हैं - जितने विजयी बनने चाहो उतनी बड़ी विजय माला बन सकती है। १०८ की हद में भी नहीं आओ। हैं ही १०८ नम्बर, हम तो उसमें आ नहीं सकते - ऐसी कोई बात नहीं है। बनो।

विजयी बनने के लिए एक बैलेन्स की आवश्यकता है। याद और सेवा का बैलेन्स तो सदा सुनते रहते हैं लेकिन याद और सेवा का बैलेन्स चाहते हुए भी रहता क्यों नहीं है? समझते हुए भी कर्म में क्यों नहीं आता है? उसके लिए एक और बैलेन्स की आवश्यकता है, वही बैलेन्स ब्रह्मा बाप की दूसरी आशा है। एक आशा तो बाप प्रति हुई - समान बनने की। दूसरी आशा परिवार प्रति, वह है - हर ब्राह्मण आत्मा प्रति सदा शुभ भावना-शुभ कामना कर्म में रहे, सिर्फ संकल्प तक वा चाहना तक नहीं। चाहते तो हैं। कई कहते हैं चाहना तो यही है कि शुभ भावना रखें लेकिन कर्म में बदल जाता है। इसका विस्तार पहले भी सुनाया है। परिवार प्रति सदा शुभ भावना-शुभ कामना क्यों नहीं रहती, इसका कारण? जैसे बाप से दिल का स्नेह, जिगर का स्नेह है और दिल के जिगर के स्नेह की निशानी है कि अटूट है। बाप प्रति कोई कितना भी आपको मिस अन्डरस्टैंड (गलतफहमी) करे वा कोई भी आपको कैसी भी बातें आकर सुनाए वा कभी साकार में स्वयं बाप भी कोई बच्चों को आगे बढ़ने के लिए कोई ईशारा वा शिक्षा दे लेकिन जहाँ स्नेह होता है वहाँ शिक्षा वा कोई भी परिवर्तन का ईशारा मिस अन्डरस्टैन्डिंग पैदा नहीं करेगा। सदैव यही भावना रहती वा रही है कि बाबा जो कहता है उसमें कल्याण है। कभी स्नेह की कमी नहीं हुई, और ही अपने को बाप के दिल के समीप समझते रहे कि यह अपना-पन का स्नेह है। इसको कहते हैं दिल का जगर स्नेह जो भावना को परिवर्तन कर देता है। बाप के प्रति से स्नेह की निशानी - सदा ही बाप ने कहा और ''हाँ जी'' किया, ऐसे ब्राह्मण परिवार के प्रति सदा ही ऐसा दिल का स्नेह हो, भावना परिवर्तन की विधि हो। तब बाप और परिवार में स्नेह का बैलेन्स, याद और सेवा का बैलेन्स स्वत: ही प्रैक्टिकल में दिखाएगा। तो बाप के स्नेह का पलड़ा भारी है लेकिन सर्व ब्राह्मण परिवार में स्नेह का पलड़ा बदलता रहता है। कभी भारी, कभी हल्का। किसके प्रति भारी, किसके प्रति हल्का। यह बाप और बच्चों के स्नेह का बैलेन्स रहे - यही ब्रह्मा बाप की दूसरी शुभ आशा है। समझा? इसमें बाप समान बनो।

स्नेह ऐसी श्रेष्ठता है जिसमें आपने किया या दूसरे ने किया, इसमें दोनों में समान खुशी का अनुभव हो। जैसे बापदादा स्थापना के कार्य अर्थ निमित्त बने लेकिन जब बच्चों को सेवा में साथी बनाया, अगर प्रैक्टिकल में बाप से भी बच्चे ज्यादा सेवा करते हैं, करते रहे हैं तो बापदादा सदा बच्चों को सेवा में आगे बढ़ते, स्नेह के कारण खुश रहें। यह संकल्प कभी भी दिल के स्नेह में उत्पन्न नहीं हो सकता कि बच्चे क्यों सेवा में आगे जायें, निमित्त तो मैं हूँ, मैंने ही इनको निमित्त बनाया। कभी स्वप्न-मात्र भी यह भावना उत्पन्न नहीं हुई। इसको कहा जाता है सच्चा स्नेह, नि:स्वार्थ स्नेह, रुहानी स्नेह। सदा बच्चों को आगे निमित्त बनाने में हर्षित रहे। बच्चों ने किया या बाप ने किया, मैं-पन नहीं रहा। मेरा काम है, मेरी ड्यूटी है, मेरा अधिकारी है, मेरी बुद्धि है, मेरा प्लैन है - नहीं। स्नेह यह मेरापन मिटा देता है। आपने किया सो मैंने किया, मैंने किया सो आपने किया - यह शुभ भावना वा शुभ कामना, इसको कहा जाता है दिल का स्नेह। स्नेह में कभी अपना या पराया नहीं लगता। स्नेह में कभी स्नेह का बोल कैसा भी साधारण, हुज्जत का बोल हो लेकिन फील नहीं होगा। फीलिंग नहीं आएगी - इसने यह क्यों कहा। स्नेही, स्नेही आत्मा के प्रति अनुमान पैदा नहीं करेगा - ऐसा होगा, यह होगा! सदा स्नेही के प्रति फेथ होने के कारण उसका हल्का बोल भी ऐसे लगेगा कि इसने अवश्य कोई मतलब से कहा है। बेमतलब, व्यर्थ नहीं लगेगा। जहाँ स्नेह होगा, वहाँ फेथ जरूर होगा। स्नेह नहीं तो फेथ भी नहीं होगा। तो ब्राह्मण परिवार के प्रति स्नेह वा फेथ होना - इसको कहते हैं ब्रह्मा बाप की दूसरी आशा पूर्ण करना। जेसे बाप के प्रति स्नेह के लिए बापदादा ने सर्टिफिकेट दिया, ऐसे ब्राह्मण परिवार के प्रति जो स्नेह की परिभाषा सुनाई वा उस विधि से प्रत्यक्ष कर्म में आना – यह भी सर्टिफिकेट लेना है। यह बैलेन्स चाहिए। जितना बाप से उतना बच्चों से - यह बैलेन्स न होने के कारण सेवा में जब आगे बढ़ते हो तो खुद ही कहते हो - सेवा में माया आती है। और कभी वायुमण्डल को देख इतना भी कहते हो कि ऐसी सेवा से तो याद में रहना ही अच्छा है, सबसे सेवा छुड़ाके भट्ठी में बिठा दो। आप लोगों के पास यह संकल्प होते हैं समय प्रमाण।

वास्तव में सेवा मायाजीत बनाने वाली है, माया लाने वाली नहीं है। लेकिन सेवा में माया क्यों आती है? इसका मूल कारण दिल का स्नेह नहीं है, परिवार के प्रमाण स्नेह है। लेकिन दिल का स्नेह त्याग की भावना उत्पन्न करता है। वह न होने के कारण कभी-कभी सेवा माया-रूप बन जाती है और ऐसी सेवा को सेवा के खाते में जमा नहीं कर सकते - चाहे कोई ५०-६० सेन्टर्स खोलने के भी निमित्त बन जाए! लेकिन सेवा में खाते में या बापदाद की दिल में सेवा का जमा खाता उतना ही होता है जो माया से मुक्त हो, योग-युक्त हो करते हो। किसके पास दो सेन्टर हैं, देखने में दो सेन्टर की इन्चार्ज आती है, और कोई ५० सेन्टर्स की इन्चार्ज दिखाई देती है, लेकिन अगर दो सेवाकेन्द्र भी निर्विघ्न हैं, माया से, हलचल से, स्वभाव-संस्कार के टक्कर के टक्कर से मुक्त हैं तो दो सेन्टर वाले का भी ५० सेवाकेन्द्र वाले से ज्यादा सेवा का खाता जमा है। इसमें खुश नहीं हो जाओ कि मेरे ३० सेन्टर्स हैं, ४० सेन्टर्स हैं। लेकिन माया से मुक्त कितने सेन्टर्स हैं? सेन्टर भी बढ़ाते जाओ, माया भी बढ़ाते जाओ - ऐसी सेवा बाप के रजिस्टर में जमा नहीं होती है। आप सोचेंगे - हम तो बहुत सेवा कर रहे हैं, दिन-रात नींद भी नहीं करते, खाना भी एक बार बनाके रात को खा लेते - इतना बिजी रहते! लेकिनि सेवा के साथ-साथ माया में भी बिजी तो नहीं रहते? यह क्यों हुआ, यह कैसे हुआ, इसने क्यों किया, मैंने क्यों नहीं किया, मेरा हक, तेरा हक लेकिन बाप का हक कहाँ गया? समझा? सेवा अर्थात् जिसमें स्व के और सर्व के सहयोग वा सन्तुष्टता का फल प्रत्यक्ष दिखाई दे। अगर सर्व की शुभ भावना-शुभ कामना का सहयोग वा सन्तुष्टता प्रत्यक्ष फल के रूप में नहीं प्राप्त होती है तो चेक करो - क्या कारण है, फल क्यों नहीं मिला? और विधि को चेक करके चेन्ज करो।

ऐसी सच्ची सेवा बढ़ाना ही सेवा बढ़ाना है। सिर्फ अपनी दिल खुश नहीं करो कि मैं बहुत अच्छी सेवा कर रही हूँ। लेकिन बाप की दिल खुश करो और ब्राह्मण परिवार के दिल की दुआयें लो। इसको कहा जाता सच्ची सेवा। दिखावे की सेवा तो बहुत बड़ी है लेकिन जहाँ दिल की सेवा होगी, वहाँ दिल के स्नेह की सेवा जरूर होगी। इसको कहते है परिवार के प्रति ब्रह्मा बाप की आशा पूर्ण करना। यह थी आज की रूहरिहान। बाकी और आगे सुनायेंगे। आज भारतवासी बच्चों की इस सीजन का लास्ट चांस है। इसलिए बापदादा क्या चाहते हैं - वह सुनाया। एक सर्टिफिकेट पास का लिया है, अभी दूसरा सर्टिफिकेट लेना है। अच्छा! अभी बाप की आशाओं का दीपक सदा जगमगाते रहना। अच्छा!

चारों ओर के सर्व ब्राह्मण कुल दीपक, सदा बापदादा की शुभ आशायें पूर्ण करने वाले, सदा बाप और परिवार के दिल के स्नेह का बैलेंस रखने वाले, सदा दिल की सेवा से सेवा का खाता ज्यादा जमा करने वाले, ऐसे बाप की शुभ आशाओं के दीपकों की, सच्ची दिल से सेवा करने वाले सेवाधारियों को बापदादा का यादप्यार और नमस्ते।

पार्टियों से मुलाकात

१. सदा अपने को कल्प पहले वाले विजयी पाण्डव समझते हो? जब भी पाण्डवों के यादगार चित्र देखते हो तो ऐसे लगता है कि यह हमारा यादगार है? तो पाण्डव अर्थात् सद मजबूत रहने वाले। इसलिए, पाण्डवों के शरीर लम्बे चौड़े दिखाते हैं, कभी कमजोर नहीं दिखाते। आत्मा बहादुर हैं, शक्तिशाली हैं, उसके बदले में शरीर शक्तिशाली दिखाये हैं। पाण्डवों की विजय प्रसिद्ध है। कौरव अक्षौणी होते भी हार गये और पाण्डव पाँच होते भी जीत गये। क्यों विजयी बनें? क्योंकि पाण्डवों के साथ बाप है, पाण्डव शक्ति-शाली हैं, आध्यात्मिक शक्ति है। इसलिए, अक्षौणी कौरवों की शक्ति उनके आगे कुछ भी नहीं है! ऐसे हो ना? कोई भी सामने आए, माया किस भी रूप में आये, तो भी वह हार खाकर जाए, जीत न सके। इसको कहते हैं विजयी पाण्डव। मातायें भी पाण्डव सेना में हो ना। या घर में रहने वाली हो? जो कमजोर होता है वह घर में छिपता है, बहादुर मैदान में आता है। तो कहाँ रहती हो, मैदान में या घर में? तो सदा इस नशे में आगे बढ़ते रहो कि हम पाण्डव सेना के विजयी पाण्डव हैं।

२. अपने को बेहद के निमित्त सेवाधारी समझते हो? बेहद के सेवाधारी अर्थात् किसी भी मैं-पन के व मेरे पन की हद में आने वाले नहीं। बेहद में न मैं है, न मेरा है। सब बाप का है, मैं भी बाप का तो सेवा भी बाप की। इसको कहते हैं बेहद सेवा। ऐसे बेहद के सेवाधारी हो याद हद में आ जाते हो? बेहद के सेवाधारी बेहद का राज्य प्राप्त करते हैं। सदा बेहद बाप, बेहद सेवा और बेहद राज्य-भाग्य - यही स्मृति में रखो तो बेहद की खुशी रहेगी। हद में खुशी गायब हो जाती है, बेहद में सदा खुशी रहेगी। अच्छा!

विदाई के समय

अभी तो सेवा के प्लैनर बहुत अच्छे बनाये हैं। सेवा भी वास्तव में उन्नति का साधन है। अगर सेवा को सेवा की रीति से करें तो सेवा लिफ्ट देती है। आगे बढ़ाने की। सिर्फ प्लेन बुद्धि बनकर प्लैन बनायें, जरा भी कुछ यहाँ-वहाँ का मिक्स न हो। जैसे कोई बढ़िया चीज बना कर रखो और यहाँ-वहाँ की हवा से कुछ किचड़ा पड़ जाए तो क्या हो जाएगा? तो सम्भाल कर रखते हैं ना। तो यहाँ-वहाँ का कुछ भी मिक्स नहीं हो जाए। ऐसे सेवा के प्लैन अच्छे बनाते हैं। सेवा में मेहनत, मेहनत नहीं लगती, खुशी होती है। क्योंकि लग्न से करते हैं, उमंग-उत्साह भी अच्छा रखते हैं। बापदादा सेवा का उमंग देखकर के खुश भी होते हैं। सिर्फ मिक्स न हो तो जितने समय में सेवा हुई है, उससे ४ गुणा हो सकती है। प्लेन बुद्धि फास्ट गति की सेवा को प्रत्यक्ष दिखाएगी। अभी फिर भी सोचना पड़ता है ना कि यह करें, यहॉ करें, यह तो नहीं होगा, वह तो नहीं होगा? लेकिन सब एक बुद्धि हो जाएं - जिसने किया वह

अच्छा, जो किया वह अच्छा। यह पाठ पक्का हो जाए तो तीव्रति की सेवा आरम्भ हो जाए। वैसे पहले से सेवा की गति तीव्र हो रही है, बढ़ रही है, सफलता भी मिल रही है। लेकिन अभी के हिसाब से, विश्व की आत्माओं को संदेश देने के हिसाब से तो अभी कोने तक पहुँचे हैं। कहाँ साढ़े पाँच सौ करोड़ आत्मायें और कहाँ संदेश पहुँचा होगा तो एक करोड़-दो करोड़ तक! बाकी कितने पड़े हैं? हाँ, यह राजधानी के नजदीक वाले पहुँच गये हैं लेकिन चाहिए तो सब। वर्सा तो सबको देना है चाहे मुक्ति दो, चाहे जीवन-मुक्ति दो। लेकिन देना तो सबको है, एक भी बाप का बच्च वंचित तो नहीं रह जाए। कैसे भी बाप के वर्से के अधिकारी तो बनना ही है, चाहे किसी भी विधि से संदेश सुनें। इसके लिए चाहिए 'तीव्रगति'। यह भी समय आ रहा है। होती जाएगी।
अभी धीरे-धीरे सभी धर्म वाले अपनी बातों में मोल्ड हो रहे हैं। पहले कट्टर रहते थे, अभी मोल्ड हो रहे हैं। चाहे क्रिश्चियन हैं, चाहे मुस्लिम हैं लेकिन भारत की फिलासॅफी को अन्दर से रिगार्ड देते हैं क्योंकि भारत की फिलासॅफी में सब प्रकार की रमणीकता है। ऐसे और धर्मों में नहीं है। कहानियों की रीति से, ड्रामा की रीति से जो भारत की फिलासॅफी की प्रसिद्ध करते हैं, वैसे और धर्मों में कहाँ भी नहीं है। इसलिए, अन्दर ही अन्दर जो एकदम कट्टर रहे हैं, वह अन्दर समझते हैं कि भारत की फिलासॅफी, उसमें भी आदि सनातन फिलासॅफी कम नहीं है। वह भी दिन आ जायेंगे जो सब कहेंगे कि अगर फिलासॅफी है तो आदि सनातन धर्म की है। हिन्दू शब्द से बिगड़ते हैं लेकिन आदि सनातन धर्म को रिगार्ड देंगे। गॉड एक है तो धर्म भी एक है, हम सबका धर्म भी एक है - यह धीरे-धीरे आत्मा के धर्म की तरफ आकर्षित होते जायेंगे। अच्छा!
प्रश्न:- सहजयोगी सदा रहें, उसकी सहज विधि कौन सी है?
उत्तर:- बाप ही संसार है - इस स्मृति में रहो तो सहजयोगी बन जायेंगे। क्योंकि सारा दिन संसार में ही बुद्धि जाती है। जब बाप ही संसार है तो बुद्धि कहाँ जायेगी? संसार में ही जाएगी ना, जंगल में तो नहीं जाएगी। तो जब बाप ही संसार हो गया तो सहजयोगी बन जायेंगे। नहीं तो मेहनत करनी पडेगी - यहाँ से बुद्धि हटाओ, वहाँ से जुड़ाओ। सदा बाप के स्नेह में समाए रहो तो वह भूल नहीं सकता। अच्छा!